श्री
समवसरण स्तुति

: प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट,
सोनगढ-३६४२५० (सौराष्ट्र)

भगवानश्रीकुन्दकुन्द-कहानजैनशास्त्रमाला, पुष्प-२५६

नमः सिद्धेभ्यः।

श्री

समवसरण-स्तुति

[रचयिता : श्री हिंमतलाल जेठालाल शाह (B.Sc.)]

एवं

कुंदकुंद-स्तवनादि स्तुतिसंग्रह

: प्रकाशक :

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट,

सोनगढ़ (सौराष्ट्र) – 364250

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ - ३६४२५०

प्रथम आवृत्ति प्रत : ८००

वि.सं. २०७३ ई.स. २०१७

श्री समवसरण-स्तुति संग्रह (हिन्दी)के

✾ स्थायी प्रकाशन-पुरस्कर्ता ✾

स्व. कल्पनाबेन रमेशचंद्र महेता, सोनगढ

ह. अनुभव, सेजल, अंकितकुमार दृष्टि

मूल्य रू. 10=00

मुद्रक :

स्मृति ऑफसेट

सोनगढ-(सौराष्ट्र)

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ - ३६४२५०

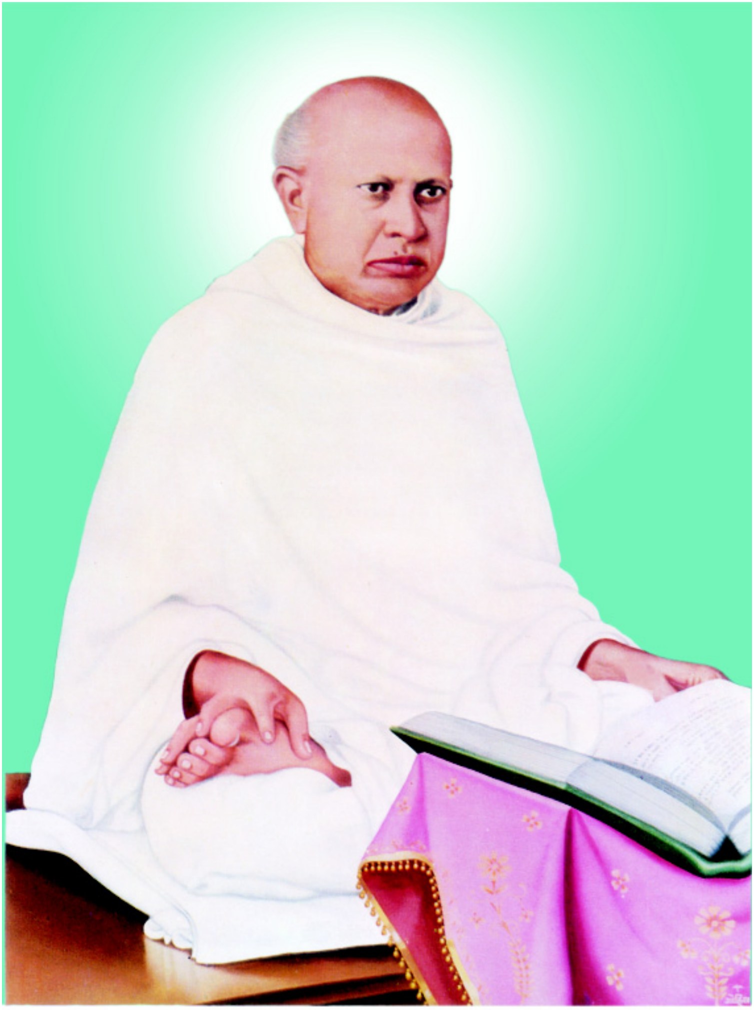

પરમ પૂજ્ય અધ્યાત્મમૂર્તિ સદ્ગુરુદેવ શ્રી કાનજીસ્વામી

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

श्री समवसरण स्तुति

(अनुष्टुप)

धर्मकाळ अहो! वर्ते, धर्मक्षेत्र विदेहमां;
वीस वीस जहां गर्जे, धोरी धर्मप्रवर्तका.

(शार्दूलविक्रीडित)

ज्यां गर्जे जगनाथ अे परिषदे रचना अलौकिक छे,
देवोना अधिवास–स्वर्ग थकीये शोभा अधिकी दीसे;
देवो–धनपति–स्हायथी सुरपति रचना रचे रम्य अे,
पोताथी ज बनेल ते निरखतां आश्चर्य पोते लहे!

(अनुष्टुप)

अचिंत्य भव्य ने दैवी, रत्नोना आरसा समुं;
प्रभुनुं अे समोसर्ण, बार योजन व्यासनुं.

(शार्दूलविक्रीडित)

धूलिसाल विशाळ, कंकण समो घेरे समोसर्णने,
देवे वर्ण विविधना रतननी रजथी रच्यो जेहने,
रत्नोनां बहुरंगनां किरणनी ज्योति अति विस्तरे,
आ शुं मेघधनुष भूमि ऊतर्युं सेवे जगत्तातने?

(अनुष्टुप)

घूलिसाल महीं आघे चार छे मानस्तंभ त्यां;
स्वर्णना ने अति ऊंचा, मानीना मान गाळता.

(स्त्रग्धरा)

चामर ने छत्र राजे, ध्वज पण फरके–भव्यने जे निमंत्रे,
घंटा वाजिंत्र वागे, सुरपतिकरथी चैत्यप्रक्षाल थाये;
चोबाजु चार वापी, स्फटिक तटवती, निर्मळा नीरवाळी,
क्यारे अे मानस्तंभे लळी लळी प्रणमुं, गर्वने सर्व गाळी ?

(शिखरिणी)

भूमि छे त्यां दैवी, [1]जिनगृह तणी पावन महा,
घणां मंदिरो ज्यां, अतिशय मनोरम्य रचना;
मनुष्यो देवो त्यां प्रभुभजन ने नृत्य करता,
अहो! भक्तिभीनां प्रभुचरणमां चित्त ढळतां.

(अनुष्टुप)

कंकणाकारनी छे त्यां, [2]खातिका जलधि समी;
तरंगो, जळप्राणीथी, देव-नावोथी दीपती.

(उपजाति)

मणिना किनारा, अति स्वच्छ पाणी,
जळ शुं द्रव्यां आ शशिकान्तमांथी!

१. जिनमंदिर २. खाई

प्रभु पूजवानी अति भावनाथी
शुं सुरगंगा ऊतरी ऊंचेथी ?

(अनुष्टुप)

भूमि भव्य लतावननी, म्हेकती सुरभिवती;
लताओ ज्यां हसे सर्वे, खीलेलां सुमनो थकी.

(हरिगीत)

त्यां मंद लहरे विविधरंगी पुष्परज बहु ऊडती,
जे ढांकती वन-गगनने संध्या समा रंगो थकी;
पर्वत क्रीडाना दिव्य ने मंडप लताना भव्य छे,
शीतळ शिला [१]शशिकान्तनी ज्यां इंद्र विश्रांति लहे.

(उपजाति)

ऋतु ऋतुनां फूल त्यां खील्यां छे,
वायु सुगंधी बहु विस्तरे छे;
सुवास शुं ओ वननां फूलोनी,
के शुं सुकीर्ति जिनना गुणोनी ?

(अनुष्टुप)

त्यां छे कोट अति ऊंचो, स्वर्णनो मणिओ जड्यो;
स्वर्णना आभमां जाणे, शोभे नक्षत्रमंडळो.

---

१. चंद्रकांतमणि

(शार्दूलविक्रीडित)

देवो रक्षक द्वारना, कर विषे आयुध धारी ऊभा,
मंगळ द्रव्य सुरम्य ने नवनिधि, सो तोरणो शोभता;
द्वारोनी द्वय बाजुअे स्फटिकनी बे नाट्यशाळा दीसे,
दूरे बे घट धूपना, धूम थकी ढांके अहो! आभने.

(हरिगीत)

अे नाट्यशाळा गाजती वीणा मृदंग सुतालथी,
गांधर्व–किन्नरी गानथी, बहु देवदेवी सुनृत्यथी;
देवांगना जयगान करती, नाचती, आनंदती,
अभिनय करी जिन–विजयनो कुसुमांजलि जिन अर्पती
—कुसुमांजलि प्रभु अर्पती.

(शार्दूलविक्रीडित)

चंपक, आम्र, अशोक आदि वननी भूमि मनोहारिणी,
वच्चे रम्य नदी, तळाव, भवनो, शी चित्रशाळा रूडी!
कोकिला टहुके मधुर हलके, फळफूल वृक्षे लचे,
जाणे अर्घ लइ ऊभां तरुवरो धरवा त्रिलोकेशने!

(तोटक)

बहु वृक्ष विशाळ मनोहरणां,
रविकिरणनो पथ रोकी रह्यां,
तरुतेज झळोमळ छाई रह्यां,
नहि दिवस रात जणाय तिहां.

तहीं चैत्यतरुवर दिव्य महा,
मूळमां प्रतिमाजी विराजी रह्यां;
सुर भक्तिनी धून मचावी रह्यां,
जयगान थकी वन गाजी रह्यां.

(अनुष्टुप)

स्वर्णनी मेखला जेवी, शोभे त्यां वनवेदिका;
जडेली रत्नी छे ने, पछी छे ध्वजभूमिका.

(वसंततिलका)

माळा–मयूर–कमळादि सुचिह्न साथे,
सुवर्णस्तंभ पर शी ध्वजपंक्ति राजे!
फरकावती विजय ए जगनाथनो के
बोलावती त्रिजगने जिन पूजवाने?

(अनुष्टुप)

कान्तिमान, अति ऊंचो, कोट चांदी तणो अहो!
द्वारनी दिव्य लक्ष्मीथी, नाट्यशाळाथी दीपतो.

(तोटक)

शी कल्पतरुभूमि रम्य अहा!
नदी, वाव, सभागृह स्वर्गसमा;
दशविध अहो! तरुकल्प तळे,
निज स्वर्ग भूली बहु देव रमे.

मालांग तरु बहु माळ धरे,
दीपांग तरु पर दीप बळे;
फूलमाळ अने दीपमाळ वडे,
वन पूजी रह्युं शुं जिनेश्वरने ?

सिद्धार्थतरु अति दिव्य दीसे,
मनवांछित जे फळदायक छे;
त्रण छत्र रहे तरुराज परे
फरके ध्वज, सुंदर घंट बजे.

अे वृक्ष तळे सिद्धबिंब रहे,
सुरलोक जहां प्रभुभक्ति करे;
कोइ स्तोत्र भणे, प्रभुगुण स्मरे,
कोई नम्रपणे भगवान नमे.

कोई गान करे, कोइ नृत्य करे,
कोई शुद्ध जळे अभिषेक करे;
कोइ दीप वडे, कोई धूप वडे,
सुर पूजी रह्यां परमातमने.

(अनुष्टुप)

गोपुरादिथी शोभंती स्वर्ण–वनवेदी पछी;
अहो ! प्रासाद सुंदर ने रत्नस्तूप तणी भूमि.

(उपजाति)

सुवर्ण स्तंभो मणिनी दिवालो,
चंद्री समा उज्ज्वळ चारुं हर्म्यो;
देवो रमे त्यां, करता सुवार्ता,
नाचे, बजावे, प्रभुगान गाता.

(हरिगीत)

छे स्तूप बहु ऊंचा मनोहर, पद्मराग मणि तणा,
अरिहंत ने सिद्धो तणां बहु बिंबथी शोभे घणा;
त्यां देव–मानव भावभीना चित्तथी पूजन करे,
अभिषेक, नमन, प्रदक्षिणा करी हर्ष बहु हृदये धरे.

(अनुष्टुप)

नभोस्पर्शी, मनोहारी, अहो! कोट स्फटिकनो,
पद्मराग तणां द्वारो, मंगळ द्रव्योथी दीपतो.
पछी रत्नदिवालो ने रत्नस्तंभ परे अहो!
मंडप रत्नतणो ऊंचो, अेक योजन व्यासनो.

(वसंततिलका)

श्रीमंडपे गणधरो मुनि, अर्जिका ने,
तिर्यंच, सुरगण, मानवनी सभा छे,
अहि-मोर ने मृग-हरि निज वेर भूले,
सौ शांत लीन थई अमृतधार झीले.

(हरिगीत)

अति उच्च अे मंडप परे सुरहस्तथी पुष्पो खरे,
आ स्फटिकना नभमंडळे तारा शुं नवनवला ऊगे ?

किरणो रतननी भींतनां, वारि-तरंग समा दीसे,
शुं जिन तणा उपदेशनो अमृत-महोदधि ऊछळे ?

(वसंततिलका)

वैडूर्यरत्न तणी सुंदर पीठ शोभे,
ज्यां सोळ सीडी शुभमंगळ द्रव्य राजे;
छे धर्मचक्र अतिशोभित यक्ष माथे,
आरा सहस्र थकी बाळ दिनेश लाजे.

अे पीठ उपर सुवर्णनी पीठ बीजी,
फेलावती अति मनोहर पीत ज्योति;
सुचिह्न आठ ध्वज सुंदर त्यां फरुके,
जे सिद्धना गुण समा अति स्वच्छ शोभे.

कान्तिमती विविध रत्ननी पीठ त्रीजी,
फेलावती विविध रंगनी रम्य ज्योति;
सुरहस्तनां सुमन, मंगळ द्रव्य राजे,
चउविध सुरगण पीठ पवित्र पूजे.

(शार्दूलविक्रीडित)

शोभे गंधकुटी सुगंधस्फुरती, पुष्पे धूपे म्हेकती,
माळा मोतीनी झूलती गगनने रत्नद्युति रंगती;
रत्नोमय शिखरो परे मनहरा लाख्खो धजा ल्हेरती,
शोभानी अधिदेवता! शुं तुजमां जगश्री मळी सामटी?

(वसंततिलका)

दिव्यप्रभामय सिंहासन त्यां अनेरुं,
सुवर्णनुं, बहुमूला मणिअे जडेलुं;
दैवी सहस्रदळ पंकज लाल सोहे,
जे पंकजे सुर–मनुजनुं चित्त मोहे.

(उपजाति)

ऊंचे चतुरांगुल जिन राजे,
इन्द्रो, नरेंद्रो, मुनिराज पूजे;
जेवुं निरालंबन आत्मद्रव्य,
तेवो निरालंबन जिनदेह.

(हरिगीत)

चामर ढळे चोसठ प्रभुने क्षीर–अमृत–ऊजळां,
शुं क्षीरसमुद्रतरंग ने गिरिनिर्झरो जिन सेवता?
त्रण छत्र शोभे जिनशिरे जिनकीर्तिनी मूर्ति समा,
मौक्तिकप्रभा थकी चंद्र ने रत्नांशुथी भास्कर समा.

योजनविशाळ अशोक तरुवर शोकतिमिर निवारतुं,
मणिस्कंध, मणिमय पत्र ने मणिपुष्पथी शुं शोभतुं !
शाखा अनेक झूले अने अलिगण मधुर गुंजन करे,
शुं वृक्ष हस्त हलावतुं बहु भक्तिथी जिनने स्तवे ?

(तोटक)

[१]चतुराननशोभित जिन दीसे,
अशुचि नहि दिव्य शरीर विषे;
नहि रोग, क्षुधा, न जरा तनमां
न निमेष अहो ! [२]नयनांबुजमां.

मणिपुंज, सुधारस, चंद्र थकी
वधु सुंदरता जिनदेह तणी;
अति सौम्य प्रसन्न मुखांबुजमां,
भविनेत्र–अलि बहु लीन बन्या.

जिनदेहदिवाकर तेज विषे,
सुरतारकवृंदनुं तेज छुपे;
रविबिंबप्रभा थकी कांति घणी
जिनभास्कर– [३]ओजसमंडळनी.

सुर–दानव–मर्त्यजनो निरखे
स्वभवांतर सात प्रमोद वडे–

१. चार मुख २. नयनरूपी कमळ ३. भामंडळ

जिनदेहप्रभा अति पावनमां
–जगना बहुमंगळ दर्पणमां.

घनगर्जनशी जिनवाणी झरे,
भविचित्तमयूर शुं नृत्य करे!
सुर–दुंदुभिवाद्य बजे नभमां,
फूलवृष्टि थती बहु योजनमां.

अति कर्णमधुर प्रभुध्वनिमां,
गणी विस्मित थाय 'शी गंभीरता';
ध्वनिधोध वडे भविचित्त भींजे,
शुचि ज्ञान सूझी भवताप बुझे.

ध्वनि दिव्य निरक्षर अेक भले,
बहुरूप बने, जीव सौ समजे;
ज्यम मेघ तणुं जळ अेक भले,
तरुभेद वडे बहु भेद लहे.

जिननाद झीली बहु ज्ञानी बने,
व्रतधारी अने निर्ग्रंथ बने;
मुनिराज गणी जिनवाणी वडे,
स्व-अनुभवतार अखंड करे.

(वसंततिलका)

अंकुर अेक नथी मोह तणो रह्यो ज्यां;
अज्ञान–अंश बळी भस्मरूपे थयो ज्यां;

आनंद, ज्ञान, निज वीर्य अनंत छे ज्यां,
त्यां स्थान मागुं–जिननां चरणांबुजोमां.

जे आभमां जगत आ परमाणुतुल्य,
ते अंतहीन नभनुं जहीं पूर्ण ज्ञान;

सौ द्रव्यना युगपदे त्रण काळ जाणे,
ते नाथने नमन हो मुज नम्रभावे.

दैवी समोसरणमां नहि राग किंचित्,
धूलि मलिन पर ज्यां नहि द्वेष किंचित्;
धूलि, समोसरण केवळ ज्ञेय जेमां,
ते ज्ञानने नमन हो जिनजी! अमारां.

(शिखरिणी)

भले सो इन्द्रोना, तुज चरणमां शिर नमता,
भले इन्द्राणीना रतनमय स्वस्तिक बनता;
नथी ओ ज्ञेयोमां तुज परिणति सन्मुख जरा,
स्वरूपे डूबेला, नमन तुजने, ओ जिनवरा!

(वसंततिलका)

जगना अगाध तिमिरे प्रभु! सूर्य तुं छे,
अज्ञान–अंध जगनुं प्रभु! नेत्र तुं छे;
भवसागरे पतितनुं प्रभु! नाव तुं छे,
माता, पिता, गुरु, जिनेश्वर! सर्व तुं छे.

तीर्थंकरो जगतना जयवंत वर्तो,
ॐकारनाद जिननो जयवंत वर्तो;
जिननां समोसरण सौ जयवंत वर्तो,
ने तीर्थ चार जगमां जयवंत वर्तो.

(अनुष्टुप)

समोसर्ण जिनेश्वरनुं, शास्त्रमां बहु वर्णव्युं;
परंतु अे महार्णवनुं, बिदुं मात्र तहीं कह्युं.
विना जोये न समजाये, समोसर्ण जिनेशनुं;
भरते भाग्य न आ काळे, महाभाग्य विदेहीनुं.

(वसंततिलका)

जिनना समोसरणनुं अहीं भाग्य छे ना,
दिव्यध्वनि श्रवणनुं पण भाग्य छे ना;
तोये सीमंधर अने वीरना ध्वनिना
पडघा सुणाय मधुरा हजु आगमोमां.

(अनुष्टुप)

विक्रमशक प्रारंभे, घटना अेक बनी महा;
विदेही ध्वनिना रणका, जेथी आ भरते मळ्या.

(हरिगीत)

बहु ऋद्धिधारी कुंदकुंद मुनि थया अे काळमां,
जे श्रुतज्ञानप्रवीण ने अध्यात्मरत योगी हता;

आचार्यने मन अेकदा जिनविरहताप थयो महा,
रे! रे! सीमंधरजिनना विरहा पड्या आ भरतमां!

(शार्दूलविक्रीडित)

अेकाअेक छूटयो ध्वनि जिनतणो 'सद्धर्मवृद्धि हजो',
सीमंधरजिनना समोसरणमां, ना अर्थ पाम्या जनो;
संधिहीन ध्वनि सुणी परिषदे आश्चर्य व्याप्युं महा,
थोडी वार महीं तहीं मुनि दीठा अध्यात्ममूर्ति समा.

जोडी हाथ ऊभा प्रभु प्रणमता, शी भक्तिमां लीनता!
नानो देह अने दिगंबर दशा, विस्मित लोको थता;
चक्री विस्मय-भक्तिथी जिन पूछे 'हे नाथ! छे कोण आ?'
—छे आचार्य समर्थ अे भरतना सद्धर्मवृद्धिकरा.

(अनुष्टुप)

सुणी अे वात जिनवरनी, हर्ष जनहृदये वहे;
नानकडा मुनिकुंजरने, 'अेलाचार्य' जनो कहे.

(हरिगीत)

प्रत्यक्ष जिनवर दर्शने बहु हर्ष अेलाचार्यने,
ॐकार सुणतां जिन तणो, अमृत मळ्युं मुनिहृदयने;
सप्ताह अेक सुणी ध्वनि, श्रुतकेवळी परिचय करी,
शंका निवारण सहु करी, मुनि भरतमां आव्या फरी.

(वसंततिलका)

वीरनो ध्वनि गुरुपरंपर जे मळेलो,
पोते विदेह जई दिव्य ध्वनि झीलेलो;
ते संघर्यो मुनिवरे परमागमोमां,
उपकार कुंदमुनिनो बहु आ भूमिमां.

आ क्षेत्रना चरम जिन तणा सुपुत्र,
विदेहना प्रथम जिन तणा सुभक्त;
भवमां भूलेल भवि जीव तणा सुमित्र,
वंदुं तने फरी फरी मुनि कुंदकुंद.

(अनुष्टुप)

नमुं हुं तीर्थनायकने, नमुं ॐकारनादने;
ॐकार संघर्यो जेणे नमुं ते कुंदकुंदने.
अहो ! उपकार जिनवरनो, कुंदनो, ध्वनिदिव्यनो;
जिन-कुंद-ध्वनि आप्यां, अहो ! ते गुरुकहाननो.

*

श्री पद्मनंदीआचायं कृत

जिनपूजाष्टक

(वसंततिलका)

जातिर्जरामरणमित्यनलत्रयस्य
जिवाश्रितस्य बहुतापकृतो यथावत् ।
विध्यापनाय जिनपादयुगाग्रभूमौ
धारात्रयं प्रवरवारिकृतं क्षिपामि ॥१॥

यद्वद्वचो जिनपतेर्भवतापहारि
नाहं सुशीतलमपीह भवामि तद्वत् ।
कर्पूरचन्दनमितीव मयार्पितं सत्
त्वत्पादपङ्कजसमाश्रयणं करोति ॥२॥

राजत्यसौ शुचितराक्षतपुञ्जराजि-
र्दत्ताधिकृत्य जिनमक्षतमक्षधूर्तैः ।
वीरस्य नेतरजनस्य तु वीरपट्टो
बद्धः शिरस्यतितरां श्रियमातनोति ॥३॥

साक्षादपुष्पशर एव जिनस्तदेनं
संपूजयामि शुचिपुष्पशरैर्मनोज्ञैः ।
नान्यं तदाश्रयतया किल यत्र तत्र
तत्तत्र रम्यमधिकां कुरुते च लक्ष्मीम् ॥४॥

देवो ऽयमिन्द्रियबलं प्रलयं करोति
नैवेद्यमिन्द्रियबलंप्रदखाद्यमेतत् ।

चित्रं तथापि पुरतः स्थितमर्हतो ऽस्य
शोभां बिभर्ति जगतो नयनोत्सवाय ।।५।।

आरार्तिकं तरलवह्निशिखं विभाति
स्वच्छे जिनस्य वपुषि प्रतिबिम्बितं सत् ।
ध्यानानलो मृगयमाण इवावशिष्टं
दग्धुं परिभ्रमति कर्मचयं प्रचण्डः ।।६।।

कस्तूरिकारसमयीरिव पत्रवल्लीः
कुर्वन् मुखेषु चलनैरिह दिग्वधूनाम् ।
हर्षादिव प्रभुजिनाश्रयणेन वात-
प्रेङ्खद्वगपुर्नटति पश्यत धूप धूम्रम् ।।७।।

उच्चैःफलाय परमामृतसंज्ञकाय
नानाफलैर्जिनपतिं परिपूजयामि ।
तद्भक्तिरेव सकलानि फलानि दत्ते
मोहेन तत्तदपि याचत एव लोकः ।।८।।

पूजाविधिं विधिवदत्त विधाय देवे
स्तोत्रं च संमदरसाश्रितचित्तवृत्तिः ।
पुष्पाञ्जलिं विमलकेवललोचनाय
यच्छामि सर्वजनशान्तिकराय तस्मै ।।९।।

श्रीपद्मनन्दितगुणौघ न कार्यमस्ति
पूजादिना यदपि ते कृतकृत्यतायाः ।
स्वश्रेयसे तदपि तत्कुरुते जनोऽर्हन्
कार्या कृषिः फलकृते न तु भूपकृत्यै ।।१०।।

बनवासी स्तुति

(चाल–काली कमलीवाले तुमको लाखो प्रणाम)

हे! कुन्दकुन्द बनवासी तुमको लाखों प्रणाम।
सम्यक् ज्ञान विकासी तुमको लाखों प्रणाम॥ टेक॥
अज्ञानीजन निजपद भूले परमार्थसे हैं सब लूले।
ज्ञानामृत–सुखरासी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥१॥
मिथ्यामति-घर अति भरमाये, धर्माधर्म अहो! बिसराये!
सम्यक्-भूमि निवासी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥२॥
दुर्बुद्धि हो तत्त्व न चीना, आत्मानात्मा ज्ञान न कीना।
भेदज्ञान प्रकाशी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥३॥
स्वपर ज्ञान बिन पर ही भाया, रागादिक छिन छिन अपनाया!
जिन रागी उल्लासी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥४॥
वस्तुस्वभाव धर्म नहीं जाना, पर विभाव तिन धर्म पिछाना।
हुए शुद्ध-पद वासी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥५॥
आत्मा ज्ञानमई सरधाया, गुण अरु गुणीका भेद मिटाया!
निर्विकल्प-पद भासी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥६॥
ज्ञायक-गुण जब आच्छादित था, ज्ञेय भाव में अति मोहित था!
किया सिद्धपद वासी तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥७॥
निज का निज ज्ञायक दिखलाया, स्वयं सिद्ध जब अनुभव आया।
''नन्द'' खुली भवफांसी, तुमको लाखों प्रणाम॥ हे!॥८॥

दिव्य ध्वनि आनयन

(चाल–जिनधर्मका झंडा आलममें बजवा दिया वीर जिनेश्वरने)

श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।
आत्मज्ञान का मार्ग सुलभ-कर भव्यों को समुझाय दिया।।टेक।।

गुरुवचन-सुनत-अज्ञान नशा, अरु भेदज्ञान प्रकाश-लसा।।
घटमें स्व विवेक कला विकसी, मम सहज-रूप बतलाय दिया।।
श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।।१।।

नवतत्त्व मांय निज तत्त्व भना, वह एकहि रूप अनादि बना।।
करमोंके-रसमें नाहि सना, जल-मांय कमल ज्यों लखाय दिया।।
श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।।२।।

जो कर्मास्रव के हेतू थे! वह रागादिक संभावित थे।
निज-गुण निज ही नहि भावित थे, अब सिद्ध-सदृश हि दिखाय दिया।।
श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।।।३।।

जब ज्ञान मात्र ही आत्म कहा, तब ज्ञायक रसका स्वाद लहा।
मति ज्ञानादिक ये भेद कहा, अहो! ज्ञान समुद्र दिखाय दिया।।
श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।।४।।

ज्ञानी करता ज्ञान भाव का, अज्ञानी अज्ञायक का।
बाह्य भावना कर्माश्रितका ज्ञायक-गुणमें सुझाय दिया।।
श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।।५।।

चेतन-मम सरवस्व कहा, वहां दर्शन त्रयका भेद कहां।
धन धन्न 'नन्द' सुन बचन महा भव बंध भाव-ध्वंसाय दिया।।
श्री कुंदकुंद विदेहक्षेत्रमें दिव्य ध्वनि सुन ज्ञान दिया।।६।।

*

सीमंधर स्वामि के पास जाना

(चाल-काली कमली वाले तुमको लाखों प्रणाम)

हे! कुन्दकुन्द शिवचारी तुमको लाखों प्रणाम!
शुद्धामृत-दातारी तुमको लाखों प्रणाम।।टेक।।

सीमंधरस्वामी ढिग आये, दिव्य-ध्वनि सुन गाथा लाये।
योगीश्वर-पद धारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।१।।

समयसारजी रच कर सारे, प्राभृत-बांध ग्रन्थ कर डारे।
अतुल-ज्ञान विस्तारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।२।।

शुद्धातमके जानन हारे, भव्योंके आंखों के तारे।
स्वानुभूति आहारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।३।।

दीना-नाथ दीन बहु तारे, सम्यक्-दीपक ज्ञान सहारे,
ऋषियोंके उपकारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।४।।

निज-स्वभावरस स्वादन हारे, पर विभाव तें अति ही न्यारे।
ज्ञान-दृष्टि के धारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।५।।

पर परिणाम कहे परसारे, शुद्ध बोध प्रगटावन हारे।
ज्ञान ध्यान आचारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।६।।

चित्स्वरूप-चिद् ब्रह्म सहारें, परमातमका रूप निहारे।
जगत-गुरु बलिहारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।७।।

ब्रह्मज्ञान-बोध देनारे, चरण-छांह जा रहे तिहारे।
ज्ञाना ''नन्द'' विहारी तुमको लाखों प्रणाम।। हे! कुन्द।।८।।

*

दिगम्बर धर्म अनादि

(चाल-झंडा ऊंचा रहे हमारा)

झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा, आदि दिगम्बर धर्म प्रचारा।।टेक।।

श्वेताम्बरवादी जब आये, सभी दिगम्बर जैन बुलाये।
भोले भाले तिन बहकाये, गहो-धरम मम नहीं छुटकारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।१।।

कुन्दकुन्द मुनि शीघ्र पधारे, संघ-सहित आये जब सारे,
गिरनारगिरि सभी सिधारे, उभय-पक्ष-जम-घट्ट अपारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।२।।

कुन्दकुन्द प्रभु आपहि बोले, सुनियो! मतवाले सब भोले।
यह पाषान स्वयं ही बोले, धर्म कौन है आदि करारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।३।।

संघपति गुरु श्वेताम्बर के, न्याय-युक्त वाणी सुन करके।
हर्षित हो चित धीरज धरके, किया प्रमाण उदय मति वारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।४।।

ध्वनि पाषान भेद जब गाजा, नभ में देव बजावे बाजा।
आदि धर्म सुन सुख सब पाजा, मान! मान! यह वचन हमारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।५।।

विन साधत अम्बाजी आये, साधन वाले अति पछताये।
उपसर्गोंसे धर्म बचाये, जैन दिगम्बर धर्म प्रचारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।६।।

जग उपर यह झंडा थापा, शुद्धातम रसिया लख आपा।
ज्ञानगम्य हैं आपहि आपा, देख 'नन्द' सम्यक्त्व उजारा।
झंडा कुन्दकुन्द मुनि धारा।।७।।

*

स्वानुभूति

(चाल-जिनधर्मका डंका आलममें बजवा दिया वीर जिनेश्वरने)

गुरु-कुन्दकुन्द सम पृथ्वी-पर नहीं हुए न हैं अरु होवेंगे।
स्वानुभूतिका मार्ग दिखाया यह उपकार न भूलेंगे।।टेक।।

मैं अनादि अज्ञानी था, पर-भावोंका भी करता था।
मम-ज्ञायक-छवि आच्छादित था, वह प्रगट किया क्यों भूलेंगे।
गुरु-कुन्दकुन्द सम पृथ्वी-पर।।१।।

मैं रागादिक का भावी था, ज्ञानावरणादि बंधता था।
अरु मोहछत्रपति राजा था, वह नष्ट किया! क्यों भूलेंगे।
गुरु-कुन्दकुन्द सम पृथ्वी-पर।।२।।

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ - ३६४२५०

मन वच काय रमाते थे, जब इनहीं के हो रमते थे।
उनमत्त हुए विसराये थे, बतलाय दिया क्यों भूलेंगे।
गुरु-कुन्दकुन्द सम पृथ्वी-पर।।३।।

सुख-दुःखकर कोई वस्तु नहीं, सब मन कल्पित मन-मान लही।
इस ही को सरबस मान गही, समुझाय दिया क्यों भूलेंगे।
गुरु-कुन्दकुन्द सम पृथ्वी-पर।।४।।

स्व-विवेक डटा पर-भाव फटा, भव-भाव कटा भव-बन्ध हटा।
चरणाश्रित ''नन्द'' पडा न हटा, तुम-वचन सुधा क्यों भूलेंगे।
गुरु-कुन्दकुन्द सम पृथ्वी-पर।।५।।

*

निःश्रुत-ज्ञान

(चाल - तेरे पूजनको भगवान बना मन मन्दिर आलीशान)

मेरे मन मंदिरमें आन, विराजो कुंदकुंद भगवान।।टेक।।

गुरुओंके गुरुराज हमारे, सम्यक्-रूप वचन अति प्यारे।
तुम सम नहि उपकारी महान, विराजो कुंदकुंद भगवान।। मेरे।।१।।

तुम अध्यातम विद्यादानी, तुम कर भ्रमतम सहज पलानी।
कराया आतमका पहिचान, विराजो कुंदकुंद भगवान।। मेरे।।२।।

जगत-जयी तुम ज्ञान विभूति, अनेकांतमय है अनुभूति।
निरवषेस प्रगटाते ज्ञान, विराजो कुंदकुंद भगवान।। मेरे।।३।।

Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust, Songadh - 364250

शुद्धनयालम्बी जित मोही, परिणति शुद्ध त्रिकालहि यों ही।
अनुभव ज्ञान हुआ निर्वाण, विराजो कुंदकुंद भगवान।। मेरे।।४।।

पूर्ण ज्ञान धन बोध सुहाता, निश-दिन उपलब्धि छवि-ध्याता।
अनुभव दिन प्रति सिद्ध समान, विराजो कुंदकुंद भगवान।। मेरे।५।

भेदज्ञान-बल जप निज माला, निःश्रुत हो अनुभव रस बाला।
महामंत्र यह ''नन्द'' महान, विराजो कुंदकुंद भगवान।। मेरे।६।

*

भेदज्ञान

(चाल - तेरे पूजन को भगवान बना मन-मंदिर आलीशान)

जय! जय! कुन्दकुन्द भगवान, करा दो तुम वचनामृत पान।टेक।

जिसने कहना तुमरा माना, श्रद्धा अचल स्व-गुण पहिचाना।
दिन-कर सम हो सम्यक् ज्ञान, करा दो तुम वचनामृत पान।। जय!।१।

कर्मोदय-रस भिन्न चखा दो, शुद्धातम-रसमें ललचा दो।
भव-भव होय सहज कल्याण, करा दो तुम वचनामृत पान।। जय!।।२।।

कर्माश्रित सब कर्म दिखाना, ज्ञानहि एक सुधा नित प्याना।
जय विवेक प्रगटे अमलान, करा दो तुम वचनामृत पान।। जय!।।३।।

ज्ञानाचारी सहज बनावो, ज्ञायक रस भर-भर पिलवावो।
देवोजी शिवपद गुणवान, करा दो तुम वचनामृत पान।। जय!।।४।।

सुख दुःख विभाव-गुण समझा दो, ज्ञानाश्रित अज्ञान बता दो!
सुनत भजत हो भेदज्ञान, करा दो तुम वचनामृत पान।। जय!।।५।।

ज्ञानावरण में ज्ञान विभूति हे मेधाच्छिद निज अनुभूति।
''नन्द'' ज्ञान हो केवलज्ञान, करा दो तुम वचनामृत पान॥ जय!।७।

*

बोधामृत

(चाल - झंडा ऊंचा रहे हमारा)

कुन्दकुन्द झंडा है हमारा, अविरल बोधामृत देनारा॥टेक॥

शुद्धातमका अनुभव दाता, ज्ञान-वान कर शीघ्र बताता।
स्वाभाविक-रस ही चखवाता, जान-स्वरूप मिटै भ्रम सारा॥
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा॥१॥

ज्ञानमंत्र बल स्वपद रमाता, रागादिक मल सहज वमाता।
सदा शुद्ध सिद्धोंऽहं ध्याता, बुध्यातीत ज्योति उजियारा॥
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा॥२॥

ज्ञानात्मक है आत्म सदाका, विश्वोपर है रहना जाका।
बंधाभाव स्व-महिमाका याका, बरसाता निज अनुभव धारा॥
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा॥३॥

अनुभव ज्ञानहि है शिवगामी, शिव स्वरूप लखा रूप अनामी।
रुके नहीं वह अन्तरजामी, निराबाध गुण अतुल सहारा॥
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा॥४॥

मतिज्ञानादिक भेद सब तजना, भेदों को लख भ्रम मत करना।
केवलज्ञान स्व-पद आचरना, एकहि ज्ञान सदा अविकारा।।
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा।।५।।

जो यह ज्ञान विधि आचरता, ज्ञानी हो ज्ञान-ही गुण रमता।
उस-घट मोह-पिशाच न रहता, जित-मोही हो भ्रमण निवारा।।
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा।।६।।

अंतर-दृष्टि धरें जिन धरमी, बाह्य-दृष्टि त्यागो पर धरमी।
स्वल्प-शब्द सुन हो जा मरमी, अहो "नन्द" भज वारंवारा।।
कुन्दकुन्द झंडा है हमारा।।७।।

*

आत्म-ज्ञानका विकास

(चाल - झंडा ऊंचा रहे हमारा)

झंडा कुन्दकुन्द यह न्यारा, आत्म-ज्ञान करानेवाला। टेक।।

मिथ्या मति वश भ्रमा अकेला, जन्म-मरण करता दुःख झेला।
नर नारक सुर तिर्यक मेला, अब गुरु वचन सुनो अति प्यारा।। झंडा।।१।।

निज परिणाम देख थिर होना, रागादिक-मल नित ही धोना।
ज्ञान मात्र लख ज्ञानी होना, ब्रह्मज्ञान तब हो उजियारा।।झंडा।।२।।

आत्म-धरम गह धरमी हूजे, वस्तु-स्वभाव सहज तब सूझे।
मन बच काय योग मत छूजे, मिटे आप अज्ञान पसारा।। झंडा।।३।।

निश्चय नय अनुसार विचरिये, रागादिक पर योग न डरिये।
निज स्वाधीन भाव अनुसरीये, परमातम पद मिले सहारा।। झंडा।।४।।

भूल मिटा दो हे! जगवासी, होते हो क्यों सदा उदासी।
ज्ञान हि एक सदा शिववासी, ज्ञानचक्षु ही ''नन्द'' सहारा।। झंडा।।५।।

*

चतुर अनुभवी

कुन्दकुन्द वन्दो! चतुरनर, विनशचला जीतव्य चतुर नर।। टेक।।

ज्ञान-स्वरूपी आत्म अवाची, कहे कुंदकुंद स्वामी भव्यो उर धरना।
राग द्वेष भाव सेती भिन्न ही विचरना।। कुंदकुंद।।१।।

जीव माय बहु भाव अनादि, स्वभाव विभाव तद एकहि सुमरना।
नित्य ही चिज्ज्योति मात्र देख मन भरना।। कुन्दकुन्द।।२।।

अविनाशी जो भाव स्वभावी, हिनादि-विभाव नाश रूप न विसरना।
ये ही है विवेक नांव, बैठ भव तरना।। कुन्दकुन्द।।३।।

शाश्वत अचल उद्योत अनोपम, नित्य चिद्रूप शुद्ध अनुभव करना।
इस ही उपायसेती भवदुःख हरना।। कुन्दकुन्द।।४।।

ज्ञानरु ज्ञायक एक प्रदेशी, ज्ञेय है अनेक एक क्षेत्र मांय लखना।
जलोपरि तेल सम ''नन्द'' चित्त धरना।। कुन्दकुन्द।।५।।

*

तुम अेक अलौकिक

तुम अेक अलौकिक हो भगवन् !
त्रिभुवनमें सचमुच लाखोंमें;
है मधुर शांतरस भरा हुआ,
भरपूर तुम्हारी आंखोंमें. १.

तुम जगसे बिलकुल न्यारे हो,
जीवन-आधार हमारे हो;
तुम भूल गये हो पापोंको,
है धर्म तुम्हारी आंखोंमें. २.

शुभ सहनशीलता पाठ पढा,
मनमें विरागका रंग चढा;
दिखलाई पडता है अतिशय,
अध्यात्म तुम्हारी आंखोंमें. ३.

ममताका गला दबाया है,
जगवर्द्धक लोभ हटाया है;
उपशम समतादि गुणोंका है,
भंडार तुम्हारी आंखोंमें. ४.

ये वचन तुम्हारे सुधाभरे,
जगभरका सब संताप हरे;
अति कूट-कूट कर भरी हुई,
'स्वदया' तुम्हारी आंखोंमें. ५.

तुम जीवन-मार्ग दिखाते हो,
चहुं गतिसे हमें बचाते हो;
लख तुम्हें हर्ष उभराता है,
हे नाथ! हमारी आँखोंमें. ६.

*

भगवान कुंदकुंदने अंजलि

सुखशांतिप्रदाता, जगना त्राता, कुंदकुंद महाराज;
जनभ्रांतिविघाता, तत्त्वोना ज्ञाता, नमन करुं छुं आज.
जडतानो आ धरणी उपर, हतो प्रबळ अधिकार;
कर्या उपकार अपार प्रभु! तें, रचीने ग्रंथ उदार रे...सुख० १.
वरसावी निज वचनसुधारस, कर्यो सुशीतल लोक;
समयसारनुं पान करीने, गयो मानसिक शोक रे...सुख० २.
तारा ग्रंथोनुं मनन करीने, पामुं अलौकिक भान;
क्षणे क्षणे हुं ज्ञायक समरुं, पामुं केवळज्ञान रे...सुख० ३.
तारुं हृदय प्रभु! ज्ञान-समतानुं, रह्युं निरंतर धाम;
उपकारोनी विमल यादीमां, लाखो वार प्रणाम रे...सुख० ४.

*

तुज पादपंकज ज्यां थयां....

तुज पादपंकज ज्यां थयां ते देशने पण धन्य छे;
अे गाम–पुरने धन्य छे, अे मात कुळ ज वन्य छे.

तारां कर्यां दर्शन अरे! ते लोक पण कृतपुण्य छे;
तुज पादथी स्पर्शाई अेवी धूलिने पण धन्य छे.

तारी मति, तारी गति, चारित्र लोकातीत छे;
आदर्श साधक तुं थयो, वैराग्य वचनातीत छे.

वैराग्यमूर्ति, शांतमुद्रा, ज्ञाननो अवतार तुं;
ओ देवना देवेन्द्र वहाला! गुण तारा शुं कथुं?

अनुभव महीं आनंदतो सापेक्ष दृष्टि तुं धरे;
दुनिया बिचारी बावरी तुज दिल देखे क्यां अरे.

तारा हृदयना तारमां रणकार प्रभुना नामना;
अे नाम 'सोहं' नामनुं, भाषा परा ज्यां काम ना.

अध्यात्मनी वातो करे, अध्यात्मनी दृष्टि धरे;
निज देह–अणुअणुमां अहो! अध्यात्मरस भावे भरे.

अध्यात्ममां तन्मय बनी अध्यात्मने फेलावतो;
काया अने वाणी–हृदय, अध्यात्ममां रेलावतो.

ज्यां ज्यां तमारी दृष्टि, त्यां आनंदना ऊभरा वहे;
छाया छवाये शांतिनी, तुं शांतमूर्ते! ज्यां रहे.

अध्यात्ममूर्ति, शान्तमुद्रा, ज्ञाननो अवतार तुं;
ओ कहानदेव देवेन्द्र वहाला! गुण तारा शुं कथुं?

पावन-मधुर-अद्भुत अहो! गुरुवदनथी अमृत झर्यां,
श्रवणो मळ्यां सद्भाग्यथी, नित्ये अहो! चिद्रसभर्यां;

गुरुदेव तारणहारथी आत्मार्थी भवसागर तर्या,
भव भव रहो अम आत्मने सान्निध्य आवा संतनां.

*

उद्‌घाटन गीत

धर्मध्वज फरके छे मोरे मंदिरिये;
स्वाध्यायमंदिर स्थपाया अम आंगणिये.

देव ने देवेन्द्र आ मंगळ महोत्सव उजवे;
कुंदकुंदस्वामी स्वर्गमां बेठा अमीदृष्टि करे.
आजे गंधर्वोना गीत गाजे छे;
दैवी दुंदुभीनाद गाजे छे. धर्म० १.

शासनतणा सम्राट अमारे आंगणे आव्या,
अद्‌भुत योगिराज अमारां धाम दीपाव्यां;
मीठो महेरामण आंगणिये कहान महाराज,
पुण्योदयनां मीठां फळ फळियां आज. धर्म० २.

अमृतभर्यां ज्यां उर छे, नयने विजयनां नूर छे,
ज्ञानामृते भरपूर छे, ब्रह्मचारी अे भडवीर छे;
युक्ति-न्यायमां शूरा छो योगीराज,
निश्चय-व्यवहारना साचा छो जाणनहार. धर्म० ३.

देहे मढेला देव छो, चरिते सुवर्णविशुद्ध छो,
धर्मे धुरंधर संत छो, शौर्ये सिंहण-पीध-दूध छो;

मुक्ति वरवाने चाल्या छो योगिराज,
सनातन धर्मना साचा छो ऋषिराज. धर्म० ४.

सूत्रो बताव्यां शास्त्रमां, उकेलवां मुश्केल छे,
अक्षर तणो संग्रह घणो, पण ज्ञान पेले पार छे;
अंतर्गतना भावोने ओळखनार,
आत्मिक वीर्यना साचा सेवनहार. धर्म० ५.

*

गुरुदेव उपकार

(मंदाक्रान्ता)

ज्यां जोउं त्यां नजर पडतां राग ने द्वेष हा! हा!
ज्यां जोउं त्यां श्रवण पडतां पुण्य ने पाप गाथा;
जिज्ञासुने शरण स्थळ क्यां? तत्त्वनी वात क्यां छे?
पूछे कोने पथ पथिक ज्यां आंधळा सर्व पासे.

(शार्दूलविक्रीडित)

एवा ए कळिकाळमां जगतनां कंई पुण्य बाकी हतां,
जिज्ञासु हृदयो हतां तलसतां सद्वस्तुने भेटवा;
एवा कंईक प्रभावथी, गगनथी ओ कहान! तुं ऊतरे,
अंधारे डूबता अखंड सत्‌ने तुं प्राणवंतुं करे.

जेनो जन्म थतां सहु जगतनां पाखंड पाछां पडे,
जेनो जन्म थतां मुमुक्षुहृदयो उल्लासथी विकसे;

जेना ज्ञानकटाक्षथी उदय ने चैतन्य जुदां पडे,
इन्द्रो अे जिनसुतना जनमने आनंदथी ऊजवे.

(अनुष्टुप)

डूबेलुं सत्य अंधारे, आवतुं तरी आखरे;
फरी अे वीरवाक्योमां प्राण ने चेतना वहे.

*

योगीन्द्रोने वंदन

योगीन्द्रो! तव पुनित चरण वंदन करुं!
उन्नत गिरिशृंगोना वसनारा तमे,
आव्या रंकघरे शो पुण्यप्रभाव जो;
अर्पणता पूरी नव अमने आवडे,
क्यारे लईशुं करुण उरोनो ल्हाव जो–योगीन्द्रो.

सत्यामृत वरसाव्यां आ काळे तमे,
आशय अतिशय ऊंडा ने गंभीर जो;
नंदनवन सम शीतळ ज्योत अपार जो,
ज्ञानप्रभाकर प्रगटी ज्योत अपार जो–योगीन्द्रो.

अणमूला सुतनुओ शासनदेवीना!
आत्मार्थीनी एक अनुपम आंख जो!
संत सलुणा! कल्पवृक्ष! चिंतामणि!
पंचमकाळे दुर्लभ तव दिदार जो–योगीन्द्रो.

परमपूज्य परमोपकारी गुरुदेवना विरहभावभर्युं गीत

(प्रशममूर्ति भगवती पूज्य बहेनश्री चंपाबेनना भक्तिपूर्ण हृदयमांथी वहेलुं)

(राग–अपूर्व अवसर एवो.....)

चांदलिया! संदेश देजे गुरुदेवने,
(शशियर! संदेशो देजे गुरुदेवने,)
वसी रह्या छे स्वर्गपुरीने धाम जो;
वैमानिक स्वर्गे मुज गुरुजी बिराजता,
इंद्र सरीखा शोभी रह्या अे देव जो.....चांदलिया! १.

विदेहमां स्वर्गेथी गुरुजी पधारता,
सीमंधरदर्शनथी तृप्ति अपार जो;
वैमानिक–परिषदमां गुरुवर–बेसणां,
भावभीना झीले ध्वनि अमृतधार जो....चांदलिया! २.

स्वर्णपुरीनां धामो आ सूनां थयां,
भरतक्षेत्रने छोडी चाल्या नाथ जो;
(स्वर्णपुरीने छोडी चाल्या नाथ जो;)
तुज विरहे हृदयो भक्तोनां रडी रह्यां,
टळवळता ज्यम मातविहूणां बाळ जो.....चांदलिया! ३.

विदेहक्षेत्रे गुरुजी जेम पधारता,
तेम पधारो स्वर्णपुरी मोझार जो;

स्वर्णपुरे भक्तो तुज दर्शन झंखता,
दर्शन दो, वाणी वरसावो, नाथ! जो...चांदलिया! ४.

तुज चरणोमां मनडुं मुज लागी रह्युं,
अंतरमांही लाग्यो रंग मजीठ जो;
तुज दर्शननी सेवकने नित झंखना,
श्रवण करावो चिद्रसझरता नाद जो.....चांदलिया! ५.

विमानवासी, दिव्य शक्तिधर देव छो,
विधविध कार्ये समर्थ छो गुरुदेव! जो;
आशा पूर्ण करोने गुरुजी! दासनी,
स्वर्णे पधारी वर्तावो! जयकार जो.
(आनंदमंगळ वर्तावो गुरुराज! जो.).....चांदलिया! ६.

भरते अेक अजोड रतन गुरुजी! तमे,
अंतर ऊछळ्यां श्रुतसागरनां पूर जो;
स्वर्णे नित गुरुमुखथी अमीवर्षा थती,
पंचम काळे पराक्रमी भडवीर जो.....चांदलिया! ७.

गुणमूर्ति अद्भुत श्रुतधर गुरुदेव! छो,
चिंतामणि सम चिंतित फळ दातार जो;
मंगळतामय शीतळ तारी छांयडी,
सत्य धरमना आंबा रोप्या नाथ! जो....चांदलिया! ८.

गुरुजी! तारा पड्या विरह वसमा घणा,
तारणहार थया नयनोथी दूर जो;

सेवकने छोडी गुरुजी चाल्या गया,
अंतरमां तो नित्य बिराजो नाथ! जो......चांदलिया! ९.
भवभवमां हो तुज चरणोनी सेवना,
अनंत-उपकारी भावी भगवंत जो;
शुद्धात्माना शरणे साधी साधना,
नित्ये रहेशुं देव-गुरुनी साथ जो........चांदलिया! १०.

*

श्री सीमंधरजिन-स्तवन

(ललित छंदमां)

सीमंधरनाथजी! मोह टाळजो, सुखद एहवो धर्म आपजो;
परम भावथी ध्यान हुं धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. १

जगत-नाथजी! दर्श आपजो; सुखद एहवी भक्ति आपजो;
परमभावथी ध्यान हुं धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. २

जगत-तातजी! कष्ट कापजो; सुखद एहवुं स्वरूप आपजो;
परमभावथी ध्यान हुं धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. ३

परम नाथजी! दुःख कापजो, अचल एहवुं शर्म आपजो;
परमभावथी ध्यान हुं धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. ४

परम देवरे! व्याधि कापजो, अचल एहवी शांति आपजो;
परम भावथी ध्यान हुं धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. ५

अचल देवरे! शत्रु वारजो, शरण ताहरुं सर्वदा हजो;
परमभावथी हुं ध्यान धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. ६

विपत्ति दासनी सर्व कापजो, चरण पद्मनी सेवना हजो;
परमभावथी ध्यान हुं धरुं, जिनपति! तने वंदना करुं. ७

✻

दर्शन दो माता मोरी,

(प्रशममूर्ति पूज्य बहेनश्रीनी चंपाबेनना विरहनुं गीत)

(राग–कुंवरीने खमा खमा करती)

दर्शन दो माता मोरी, फरी फरी पाय पडुं तोरी.
सीमंधरनंदन! वंदन तुजने, भव्यातम–आधारा,
पूर्वाराधन–दोर सांधीने, प्रगटी ज्ञायकधारा....दर्शन० १

लाख वर्षमां दर्शन दुर्लभ, धीर वीर गंभीरा,
श्रुतलब्धियुत माता मळियां, पुण्योदय मुज फळिया....दर्शन० २

विदाय वसमी माता तारी, क्यांये चेन न पडतुं,
सरल वदननां दर्शन काजे, मनडुं खूब तलसतुं....दर्शन० ३

आश धरे हिजरातुं हैयुं–माता दर्शन देशे,
सूकी दिलडानी वाडी आ, अमृतथी सिंचाशे....दर्शन० ४

सूनां स्वर्णपुरीनां धामो, मनमंदिर मुज सूना,
दशे दिशाओ सूनीसूनी, माता! तुज विरहामां....दर्शन० ५

अम आंगणियां पावन करवा, मात विदेही पधार्यां,
अल्प समयमां टळवळता भक्तोने छोडी चाल्यां....दर्शन० ६

वत्सलतानुं अमृतझरणुं मात–हृदयमां वहेतुं,
अम सेवकना अंतर तापो क्षणमां दूर करी देतुं....दर्शन० ७

सीमंधरप्रभुना मंगलमय संदेशा भरते लाव्यां,
'कहानगुरु तीर्थंकर थाशे'–मधुरां अमृत पायां....दर्शन० ८

मीठी मीठी दृष्टि तारी मीठां अमृत पाती,
ज्ञानखजाना खोली खोली, दान भक्तने देती....दर्शन० ९

दिव्यशक्तिधारक! स्वर्गेथी गुरुवर संग पधारो,
भक्तोना मुरझाता मनने दर्शन दई विकसावो....दर्शन० १०

उपकारी! उपकार तमारा अम अंतरमां छाया,
स्वानुभूतियुत वचनामृतना जगमां धोध वहाव्या....दर्शन० ११

चिंतामणि कल्याणी माता! अतिशय गुणगणधारी!
शिवपुरीमां साथे राखो–अेक ज अरज अमारी....दर्शन० १२

*

भगवान कुन्दकुन्दना जयनाद

सुरेन्द्रो आवो गगनना स्वाध्यायमंदिर ऊतरो;
भगवान श्री कुन्दकुन्दना जयनाद बोलो जगतमां,
भगवान श्री गुरुराजना जयनाद बोलो जगतमां. १

गुरुराज आप पधारीने, स्वाध्याय-द्वार खोलाविया;
कुन्दकुन्द कृत समयसारना, जयनाद वर्ते जगतमां. सु. २

मा! तुं अमारी सरस्वती स्थापन करुं हुं ताहरुं;
शी शी करुं तारी स्तुति तुं जीवनदात्री भगवती. सु. ३

सत्य वस्तु मार्गदर्शक, शासनतणा सिंह केसरी;
कुन्दकुन्द कृत प्राभृततणी, सरिता वहावी राजवी. सु. ४

भगवान श्री कुन्दकुन्द छो, समयसारजी दातार छो.
ग्रंथो तणा गूढ मर्मदाता, साक्षात् श्रीकहान छो. सु. ५

दुंदुभी नाद बजाववा, ए स्वर्गसंगीत लावजो;
आवो गवैया स्वर्गना, सुवर्णना मेदानमां, सु. ६

आवजो, सहु आवजो, समयसारजी गुणगानमां;
लई भाग आजे होंशथी, जयकार होजो जीवनमां. सु. ७

સહજ ચિદાનંદ.

*

जय समयसार

जय समयसार! जय समयसार!

सुख प्रकाशिनी माता तू है,
दुःखविनाशिनी माता तू है,
नयविकाशिनी माता तू है,
स्वर्ग मुक्ति दातार....जय. १

तू है निर्मळ ज्ञान हमारा,
तू है गुण छविमान हमारा,
तू है स्वर्ण विहान हमारा,
मूर्तिमान उपकार....जय. २

तू अेकान्त नशानेवाली,
अनेकान्त दरशानेवाली,
जगका ध्वान्त मिटानेवाली,
नाशक मिथ्याचार....जय. ३

तुझमें विमलाभास भरा है,
तुझमें ज्ञानविकास भरा है,
तुझमें धर्म प्रकाश भरा है.
तू है गुणभंडार....जय. ४

तुझसे है जग में उजियाला,
तू पवित्र है ज्ञान निराला,
तू है गुणमंडित मणिमाला,
तू जगका शृंगार...जय. ५

सम्यग्‌दर्शन मित्र हमारा,
सम्यग्‌ज्ञान विचित्र हमारा,
सत्‌ सम्यक्‌चारित्र हमारा,
तू सम्यक्त्व त्रिधार...जय. ६

तू है तीर्थंकरकी वाणी,
पीकर तेरा निर्मल पानी,
बनता है जग केवलज्ञानी,
तू है ज्ञानागार....जय. ७

मां तू है सद्ज्ञान उजागर,
महिमामय भूषित गुण-आगर,
शान्ति, प्रेम, नयका सुख सागर,
महिमा अपरंपार....जय. ८

मां! हमको स्वात्माभिमान दे,
आत्मोन्नतिका मधुर दान दे,
कर्म विनाशक विमल ज्ञान दे,
दे श्रुतिज्ञान उदार....जय. ९

रक्षक तू है जननि हमारी,
हम हैं तेरे कृपाभिखारी,
तन मन धन तुझ पर बलिहारी,
वरद स्वपाणि पसार...जय. १०

मां अज्ञान हमारा हर दे,
सुंदर शुचिकर शुचितर वर दे,
शशि–शीकर बनकर जग भर दे,
हर दे सकल विकार....जय. ११

सरस्वती स्तवन

(भुजंगप्रयात)

जिनादेशजाता जिनेन्द्रा विख्याता,
विशुद्धप्रबुद्धा नमों लोकमाता;
दुराचार दुर्नैहरा शंकरानी,
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। १

सुधाधर्मसंसाधनी धर्मशाला,
मुधाताप निर्नाशनी मेघमाला;
महामोहविध्वंसनी मोक्षदानी,
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। २

अखैवृक्षशाखा व्यतीताभिलाषा,
कथा संस्कृता प्राकृता देशभाषा;
चिदानन्द–भूपालकी राजधानी,
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। ३

समाधानरूपा अनूपा अछुद्रा[१],
अनेकान्तधा स्यादवादांकमुद्रा;
त्रिधा[२] सप्तधा[३] द्वादशांगी बखानी,
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। ४

अकोपा अमाना अदंभा अलोभा,
श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा;

१ अछुद्रा-शुद्ध, २ उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य त्रिपदी। ३ सप्तभंगी।

महापावनी भावना भव्यमानी,
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। ५

अतीता अजीता सदा निर्विकारा,
विषैवाटिकाखंडिनी खड्गधारा;
पुरापापविक्षेपकर्तृकृपाणी[१],
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। ६

अगाधा अबाधा निरंध्रा[२] निराशा,
अनंता अनादीश्वरी कर्मनाशा;
निशंका निरंका चिदंका भवानी,
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। ७

अशोकामुदेका[३] विवेका विधानी,
जगज्जंतुमित्रा विचित्रावसानी[४];
समस्तावलोका निरस्तानिदानी[५],
नमो देवी वागेश्वरी जैनवानी। ८

जैनवाणी जैनवाणी सुनहिं जे जीव,
जे आगम रुचि धरें जे प्रतीति मनमांहि आनहि;
अवधारहि जे पुरुष समर्थ पद अर्थ जानहि.
जे हितहेतु बनारसी, देहिं धर्म उपदेश;
ते सब पावहिं परमसुख तज संसार क्लेश।।९।।

---

१ तरवार जेवी मोटी छरी, २ वर्णशंकर विनानी, ३ खुशी उत्पन्न करनारी, ४ विचित्र परिणाम लावनारी, ५ निदानने दूर करनारी।

अनुभव-भावना

(चाल-ख्याल)

कुन्दकुन्द अनुभव आश्रय कर, विकसित हो चैतन्य कमल।
उठै-सुवास-ज्ञान-गुण नित ही, व्याप्य रहा जो तन मण्डल॥ टेक॥

द्रव्यकर्म ज्ञानावरणादिक, भाव-कर्म रागादि सकल।
मिथ्या अविरत अरु कषाय चव, योग-चलाचल आप अचल॥
तीन-काल मय जान व्यवस्था, द्रव्यदृष्टि धारो बुधबल।
मनुष्य जन्मका सार होय जब, छांड विभाव ममत्व विकल॥
कुंदकुंद॥१॥

नित्यानित्यभाव आतमका, कहै जिनागम हो! बुधवान।
यदि प्रमाण तद भज ज्ञायक-गुण चमक रहा नित करलो ज्ञान॥
चिदानंद-मय है अनादिका, प्रगट दिपै अति ही अमलान।
उत्पत्ति-नाश अवस्था नाही, स्वयं सिद्ध हो! सिद्ध समान॥
कुंदकुंद॥२॥

बिन विवेक हो नित अज्ञानी पर-परणति में होय निहाल।
राग-द्वेष मल निज-मय भाषै, यही ऐक्यता परखौ लाल॥
आत्म-रूप रागादिक मांहीं, भेद-ज्ञान करो ततकाल।
शुद्ध निरंजन ज्ञायकमय छवि, प्रगट होय शशिसम त्रैकाल॥
कुंदकुंद॥३॥

चित्ताश्रय है कर्मजाल सब, उदय देख नाना परकार।
ज्यों दर्पण रे सम्मुख भाषै, विविध वर्ण अरु बहु आकार॥

कर्मकृत सह भाव कर्मका, जीव अकर्ता कहा पुकार।
बिन जानें निज ज्ञायक गुण के, निज अनुभव-रस नहीं प्रसार॥
कुंदकुंद ॥४॥

हास्य-शोक भय क्रोधादिक अरु, संयम आदि अनेकविधान!
सम्यक् मिथ्या उपशमादि बहु, भेद सभी करलो पहिचान॥
अंतर-दृष्टि धार अपने में ज्ञायक गुणधारी भगवान।
ज्यों कल्लोल मांय स्वच्छ गुण जल-स्वभाव है स्थिर पहिचान॥
कुंदकुंद ॥५॥

महामोह वश हो अज्ञानी, ज्ञान विना प्रगटा अविचार।
विषय लोलुपी अति जगवासी, निज स्वरूप में मिथ्याचार॥
कहें नन्द-त्रैकाल ज्ञानमय जान! स्वरूप नित्य अविकार।
ध्यावो निशदिन बार बार बुध, द्वादशांगी-वाणी का सार॥
कुंदकुंद ॥६॥

भ्रमसिन्धु-तरण

हे! कुन्दकुन्द स्वामी, आकर जरा दिखाजा,
स्वात्मोपयोगी बातें, इक बार फिर सुना जा॥टेक॥

अज्ञानी हो भुलाया, दुर्बुद्धिने सताया।
सम्यक् सुधा पिलाकर, स्वात्मिक कमल खिला जा॥ हे!॥१॥

बहिरात्म-बुद्धि धारा जन्मा मरा अपारा।
भ्रम-सिंधु से निकालो, परमात्मपद दिखाजा॥ हे!॥२॥

निज को नजर न आता, परभाव ही सुहाता।
ज्ञानात्म-भावना कर, निज-आत्ममें रिझा जा।। हे!।।३।।

कर्मों का जाल छाया, अरु मोह ने सताया।
साता तनिक न आति शुद्धात्म-रस पिलाजा।। हे!।।४।।

सम्पत्ति सभी विरानी, उस ही में चित्त लुभानी।
मति मन्द हो पडा हूं, कुछ ज्ञानघन दिलाजा।। हे!।।५।।

मानुष जनम भी पाया, विषयों में योग धाया।
ज्ञानान्ध को मिटा दो, करिये यही लिहाजा।। हे!।।६।।

तत्त्वों को न पिछाना अतत्त्व तत्त्व माना।
हो तत्त्व ज्ञान सम्यक्, टुक दृष्टि को फिराजा।। हे!।।७।।

विद्या वही सिखा दो, अज्ञान मूल खो दो।
ज्ञानात्म नन्द-बिचरे, जग-वंद्य अबकी आजा।। हे!।।८।।

*

श्रीमत्कुन्दकुन्दाचार्यकी स्तुति

(अशोक पुष्पमंजरी)

जासके मुखारविन्दतें प्रकाश भास वृन्द,
स्याद्वाद जैन वैन इन्दु कुन्दकुन्दसे।
तासके अभ्यासतें विकाश भेदज्ञान होत,
मूढ सो लखें नहीं कुबुद्धि कुन्दकुन्दसे।।
देत है आशीस शीस नाय इन्द्र चंद्र जाही,

मोह-मार-खण्ड मारतण्ड कुन्दकुन्दसे।
शुद्ध बुद्धि वृद्धिदा प्रसिद्धरिद्धिसिद्धिदा,
हुए न हें, न होहिंगे, मुनींद कुन्दकुन्दसे॥

—वृंदावन

*

जिन-वाणी

(चाल – तेरे पूजनको भगवान बना मनमंदिर आलीशान)

भ्रात! जिनवाणी सम नहि आन,
जान! श्रुत पंचमि पर्व महान॥ टेक०॥

एकान्तों का नहीं ठिकाना, स्यादवाद का लगा निशाना।
मिटाता भव भवका अज्ञान॥ जान० ॥१॥

केवलज्ञानी की यह वाणी, खिरै अनक्षर तदि सम ज्ञानी।
सुर नर तिर्यक सुनते आन॥ जान० ॥२॥

गणधर हृदय बिराजी माता, वस्तुस्वभाव सहज झलकाता।
सुनत भजत हो भेदविज्ञान॥ जान० ॥३॥

भवि-जन प्रीति सहित चित धारैं, रवि शशि-सम तम को परिहारें।
उस घट प्रगटै पूरण ज्ञान॥ जान० ॥४॥

मोक्ष दायिक हे! हे जिन-माता! तुम पूजक सम्यक्पद पाता।
नन्द—आपके आश्रित मान॥ जान० ॥५॥

स्वागत

बोलोजी! स्वामी कुन्दकुन्द जय हो॥ टेक॥

स्वागत को हम हरष हरष कर, आये हैं प्रभु शरण तिहारे॥
स्वामी० ॥१॥

स्वात्मिक-गुण सुध निर्मळ जलसम, प्यावो जी, हम तृषित दिनारे॥
स्वामी० ॥२॥

अव्याबाध सहजगुण आवृत, दरसा दो, गुरु तुम ही हमारे॥
स्वामी० ॥३॥

आप सु विद्यापति जगपति प्रभु देवो! नन्द-स्वपद गुण वारे॥
स्वामी० ॥४॥

*

अन्तरजामी

(चाल थियेटरी)

आवो! आवो! गुरु-कुन्द स्वामी, प्यादो बोधामृत अंतरजामी॥टेक॥
तेरे समान नहीं कोई महान। आजा! दिखाजा! तू एकीनामी॥
आवो! ॥१॥

मिथ्यामती वश जन्म मरा, योनी भी लख-चौरासी धरा।
सम्यक्-क्षुधा प्यादो जरा! मानो कहा! मानोस्वामी आवो॥
आवो! ॥२॥

मैं हों अनादि शुद्धात्मस्वरूप, राग न द्वेषी न किसकेहि रूप।
दिखावो जरा! दृष्टिफिरा! मानो कहा! बतादो स्वामी।।
आवो!।।३।।

ज्ञानस्वरूपी ज्योति भरा, ज्ञाता है–दृष्टि है जानों जरा।
ज्ञायक है नन्द! न जन्मा-मरा! जताना-खरा! आपी स्वामी।।
आवो!।।४।।

*

महावीर जयंति

(चाल–तेरे पूजनको भगवान बना मन–मंदिर आलीशान)

जय जय महावीर भगवान! सदा तुम चरणाम्बुज का ध्यान।।

बालपने गृहवास न कीना। बाल-ब्रह्मचारी-रस भीना।
हुए दिगम्बर यती महान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

मन इन्द्रिय को वश निज कीना, राग द्वेष का रस नहीं लीना।
हना मोह सुभट बलवान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

घाति-कर्मका नाश हुआ जब, लोकालोक प्रकाश ज्ञान तब।
भये आप अरहंत महान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

समवसरण की हुई तियारी, ऋषि मुनि खग सब मंझारी।
खिरे अनक्षर ध्वनि अमलान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।जय०

सब जन सुने बैर नहि आने, वाणी सब के चित्त में सानै।
सुनै अहिंसा-धर्म प्रधान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

कर विहार जिनधर्म बताया, धर्मादिक पुरुषार्थ सुझाया।
क्रिया अपूर्व जगत कल्यान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

शुक्लध्यान से लीन हुए जब, पंच-लघुक्षर शेष समय तब।
हुए आप सब सिद्ध समान, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

देख जयन्तीका उत्सव दिन, गावो सब मिल निज गुण निशदिन।
नंद-जन्मका हो अवसर, सदा तुम चरणाम्बुजका ध्यान।। जय०

*

श्री प्रणव-माहात्म्य

ॐकारं बिन्दुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमो नमः ।।

(धनाक्षरी)

'ॐकार' शब्द [१]विशद याके उभयरूप,
एक आतमीक भाव एक पुदगलको;
शुद्धता स्वभाव लिये उठ्यो राय [२]चिदानंद,
अशुद्ध विभाव लै प्रभाव जडबलको;
त्रिगुण त्रिकाळ तातैं व्यय-ध्रुव-उतपात,
ज्ञाताको सुहात बात नहीं लाग खलको;
बनारसिदासजूके हृदय 'ॐकार' वास,
जैसो परकाश [३]शशि पक्षके शुकलको. १.

१ विशाल २ ज्ञानस्वरूपका आनंद ३ चंद्र

निरमल ज्ञानके प्रकार पंच नरलोक,
तामें श्रुतज्ञान परधान करी पायो है;
ताके मूल दोषरूप अक्षर अनक्षरमें,
अनक्षर अग्र पिंड, सैनमें बतायो है;
बावन वरण जाके असंख्यात सन्निपात,
तिनिमें नृप 'ॐकार' सज्ञन सुहायो है;
बनारसिदास अंग द्वादश विचार यामें;
अैसो 'ॐकार' कंठ पाठ तोहि आयो है. २.

महामंत्र 'गायत्री'के मुख ब्रह्मरूप मंड्यो,
आतमप्रदेश कोई परम प्रकाश है;
ता पर अशोक वृक्ष छत्र ध्वज चामर सो,
पवन अगनि जल वसै अेक वास है;
सारीके आकार तामें रुद्ररूप चिंतवत,
महातम महावृत तामें बहु भास है;
अैसो 'ॐकार'को अमूल चूल मूलरस,
बनारसिदास जूके वदन विलास है. ३.

✻

शारदाष्टकं

(वस्तु छंद)

नमो केवल नमो केवलरूप भगवान,
मुख ॐकार धुनि सुनि अर्थ गणधर विचारै,
रचि आगम उपदिशै भविक जीव संशय निवारै;
सो सत्यारथ सारदा तासु, भक्ति उर आन,
छन्द भुजंगप्रयातमें, अष्टक कहौं बखान।

सुमतिनां दैवीरूप १०८ नाम

(राग–जो अति अेकीभाव भयो मानो अनिवारी)

(दोहा)

नमौं सिद्धिसाधक पुरुष, नमौं आतमाराम;
वरणों देवी सुमतिके, अष्टोत्तरशत नाम. १.

(रोडक छंद)

सुमति सुबुद्धि सुधी सुबोधनिधिसुता पुनीता,
शशिवदनी सेमुषी शिवमति धिषणा सीता;
सिद्धा संजमवती स्यादवादिनी विनीता,
निर्दोषा नीरजा निर्मला जगत-अतीता.
शीलवती शोभावती, शुचिधर्मा रुचिरीति;
शिवा सुभद्रा शंकरी, मेधा दृढपरतीति. २.
ब्रह्माणी ब्रह्मजा ब्रह्मरति ब्रह्मअधीता,
पदमा पद्मावती वीतरागा गुणमीता;

शिवदायिनि शीतला राधिका रमा अजीता,
समता सिद्धेश्वरी सत्यभामा निरनीता.
कल्याणी कमला कुशलि, भवभंजनी भवानि;
लीलावती मनोरमा आनंदी सुखखानि. ३.

परमा परमेश्वरी परममंडिता अनंता,
असहाया आमोदवती अभया अघहंता;
ज्ञानवती गुणवती गौतमी गौरी गंगा,
लक्ष्मी विद्याधरी आदिसुंदरी असंगा.
चन्द्राभा चिंताहरणि, चिद्विद्या चिद्वेलि;
चेतनवती निराकुला, शिवमुद्रा शिवकेलि. ४.

चिद्वदनी चिद्रूपकला वसुमती विचित्रा,
अर्धंगी अक्षरा जगतजननी जगमित्रा;
अविकारा चेतना चमत्कारिणी चिदंका,
दुर्गा दर्शनवती दुरितहरणी निकलंका.
धर्मधरा धीरजधरनि, मोहनाशिनी वाम;
जगतविकाशिनी भगवती, भरमभेदनी नाम. ५.

(धत्ता छंद)

निपुणनवनीता, वितथविताता, सुजसा भवसागरतरणी;
निगमा निरबानि, दयानिधानी, यह सुबुद्धिदेवी वरणी. ६.

(—बनारसीविलास)

*

અનુભૂતિ તીર્થ મહાન, સ્વર્ણપુરી સોહે
યહ કહાનગુરુ વરદાન, મંગલ મુક્તિ મિલે.